

	Think India (Quarterly Journal) ISSN: 0971-1260 Vol-23, Special Issue-03 in collaboration with Indira Gandhi Government Girls Degree College, Raebareli, -229001, Uttar Pradesh, India Sponsored by Dept. of Higher Education , Govt. of U.P.	
---	--	---

NATIONAL SEMINAR ON YOGA FOR WELLNESS AND POSITIVE HEALTH
14th - 15th December, 2019 (Saturday-Sunday)

eY;k e v"V kx ;kx dh ik lfxdrk

डॉ० सुषमा देवी

प्राचार्य

इंदिरा गाँधी राजकीय महिला महाविद्यालय रायबरेली

सारांश

प्रस्तुत अध्ययन मानवीय मूल्यों के विकास में अष्टांग योग की भूमिका का प्राचीन ग्रंथों के अनुशीलन के माध्यम से किया जाता है। मानवीय मूल्य और अष्टांग योग की मान्यतायें परस्पर जुड़ी हुई हैं। मनुष्य के सामाजिक प्राणी होने से सत्य, अहिंसा, सदाचार आदि विषिष्ट की अपेक्षा की जाती है। अष्टांग योग के विभिन्न आयाम यम, नियम, आसन, प्राणायाम, प्रत्याहार, धारणा, ध्यान एवं समाधि के निरंतर अभ्यास से जहाँ मनुष्य अपने मानवीय गुणों को सबल बनाने में सक्षम होता है, वहीं आंतरिक शांति प्राप्त करते हुए समाज रूपी बेल को भी जीवंतता भी प्रदान करता है। योग द्वारा मनुष्य अपनी एकादशेन्द्रिय (पंच कर्मेन्द्रिय, पंच ज्ञानेन्द्रिय एवं एक मन) में संतुलन स्थापित करके स्वस्थ समाज का निर्माण करने में भी सक्षम होता है। अष्टांग योग द्वारा शारीरिक एवं मानसिक दोनों परिस्थितियों में समन्वय स्थापित करके समस्याओं का समाधान किया जा सकता है। इसी से हमारी संस्कृति एवं समाज दोनों ही व्यापक रूप से समृद्ध हो सकते हैं, जैसा कि श्रीमद् भगवद् गीता में कहा भी गया है— “योगः कर्मसु कौशलम्।” कर्मों में कुशलता ही योग है।

अष्टांग योग की विभिन्न अवस्थाओं को जीवन में आचरण करने पर मनुष्य प्रकृति के नियमों के साकार या निराकार रूपों को समझने के लिए संवेदना के अहसास की अनुभूति होती है। कर्म में कुशलता प्राप्त करने वह अपनी परम अवस्था या चरमोत्कर्ष की ओर आगे बढ़ता है।

परिचय

मनुष्य एक सामाजिक प्राणी है, सामाजिक प्राणी होने के निहितार्थ मनुष्य को कुछ सामाजिक मूल्यों, सिद्धान्तों, मर्यादाओं एवं विषेषताओं का भी पालन करना होना होता है। समाज की मूल आवश्यकताओं में सत्य, अहिंसा, परोपकार, विनम्रता एवं सच्चरित्र आदि अनेक गुण सम्मिलित होते हैं। साथ ही साथ यही गुण, प्रकृति द्वारा निर्मित अन्य जीवों से मानव की एक अलग संकल्पना का भी निर्माण करते हैं। किसी भी मानव में उपरोक्त गुण जन्मजात नहीं होते हैं, अपितु हर व्यक्ति इन्हें परिवार, विद्यालय एवं सामाजिक परिवेश में सीखता है और यही मानवीय मूल्य जीवन का आधार है तथा मानवता को भी जीवंतता प्रदान करता है, इन गुणों के अभाव में मनुष्य का जीवन पशु के समान है। नैतिक मूल्य प्रत्येक व्यक्ति के जीवन विकासक्रम में अहम् भूमिका का निर्वहन भी करते हैं। इसके अंतर्गत वह सभी सिद्धान्त आते हैं जो हमें सही और गलत में फर्क करना सिखाते हैं, यह हमारा व्यक्तित्व एवं कृतित्व सुधारने में भी सहायक सिद्ध होते हैं तथा समाज रूपी इस बेल को गतिशीलता तथा जीवंतता प्रदान करते हैं।

योग की संकल्पना एवं आध्यात्मिक पृष्ठभूमि के झरोखों से मानवीय मूल्यों पर दृष्टिपात करे तो योग की मूल अवधारणा ही है—“युजिर् योगे” युज धातु से घय प्रत्यय करने पर योग शब्द की उत्पत्ति होती है। योग अर्थात् जोड़ना एवं आध्यात्मिक पृष्ठभूमि में योग शब्द का प्रयोग किया जाता है, तब उसका अर्थ होता है—आत्मा से परमात्मा को जोड़ना। महर्षि पतंजलि ने आत्मा को परमात्मा से जोड़ने की क्रिया को आठ भागों में बाँट दिया है। यही क्रिया अष्टांग योग के नाम से भी प्रसिद्ध है, ^M;efu;eklu ik.kk;ke iR;kgkj /kkj.kk /;ku lek/k;k v"VkokxkfuA** योग के आठ अंगों का लक्ष्य ही आत्मा के विक्षेपों को दूर करके एक सच्चरित्र इंसान का निर्माण करना ही है। महर्षि पतंजलि द्वारा वर्णित योग के आठ अंगों के क्रम का अपने जीवन में उपयोग करके मनुष्य अपने दुर्गुणों को दूर कर सकता है— उदाहरणार्थ यम और नियम को सिद्ध किए बगैर आसन को सिद्ध नहीं किया जा सकता। सभी मत वाले इस बात को स्वीकार करते हैं कि असत्य, हिंसा की राह पर चलने वाले ईश्वर को कभी प्राप्त नहीं कर सकते। यह इस बात की पुष्टि है कि ईश्वर एवं सामाजिक मूल्यों के विकास में अष्टांग योग एक नई रोशनी द्वारा आगे बढ़ते रास्ते का निर्माण करता है।

अष्टांग योग एवं मानवीय मूल्य—एक अध्ययन

महर्षि पतंजलि के योग को अष्टांग योग या राजयोग कहा जाता है। योग के आठ अंगों में ही सभी तरह के योग का समावेश हो जाता है। भगवान बुद्ध का आष्टांगिक मार्ग भी योग के इन आठ अंगों का हिस्सा है। हालांकि योग सूत्र के अष्टांग योग बुद्ध के बाद की रचना है। अष्टांग योग का संक्षिप्त परिचय एवं मानवीय मूल्यों के विकास में इसके महत्व का रेखांकन निम्नवत् प्रकार/आधारों से किया जा सकता है—

1. यम

यम के पाँच विभाग हैं—

^Mvfglklr; cãp;kifjxgk ;e**

क. अहिंसा ख. सत्य ग. अस्तेय घ. ब्रम्हचर्य ङ. अपरिग्रह

d- अहिंसा

de.kk eu l k okpk loHkr"q lonk

अक्लेश जननं प्रोक्तं हिंसा bfr ; kxfu%A**

समाज में स्वीकार्य यह एक मान्यता है कि किसी को कष्ट, पीड़ा व दुःख देना हिंसा है, इसके विपरीत का आचरण अहिंसा है। हिंसक प्रकृति वाले मनुष्य अपनी आत्मग्लानि, असंतोष, भय आदि को दबाने के लिए एवं स्वयं की आत्मा को प्रसन्न करने का प्रयास करते हैं। स्वयं हिंसा न कर दूसरों द्वारा हिंसा किये जाने का मूक द्रष्टा बने रहने भी एक प्रकार की हिंसा ही है। हिंसा का मूल ही अन्याय है। हमें सोचना चाहिए कि इतनी योनियों में ये अनगणित प्राणी जो काट योग रहे हैं, इसका कारण क्या है, तब हमें पता चलेगा कि हिंसा क्या है? और अहिंसा क्या है? यह अहिंसा ही है जिसके कारण हम उत्तम योनि में आकर जीवन आनंद एवं सुख भोग रहे हैं और इसी संबंध में वेद, वेदानुकूल ऋषि, बुद्ध चरित्र की यह मान्यता संदेश देती है कि जितने भी गलत कार्य हैं, उन सबका मूल हिंसा ही है और जितने भी उत्तम कार्य हैं, उन सबका मूल अहिंसा ही है।

[k- सत्य

IR; Hkr fgr i kUur ; FkkU; kekfe Hkk" k. k

fi; p IR; feR; Dr IR; e rn cohehfrA**

जो जैसा है, उसको वैसा ही स्वीकार करना सत्य कहलाता है। हमें सदा अपनी वाणी से ठीक वही बात करनी चाहिए जैसी कि हमारी आत्मा में किसी घटना अथवा वस्तु के बारे में जानकारी हो, कहा भी गया है— सत्य बोलो, प्रिय बोलो। ऐसा बहुत कम होता है कि कोई विषम सत्य भी हो और अप्रिय भी हो। ऐसे समय में स्वयं की आत्मका ही निर्णायक होती है, कि अप्रिय सत्य को बोला जाय या नहीं। साधारण परिस्थितियों में मनुष्य अपने आपको झूठ बोलने से नहीं रोक पाता जबकि हमें जीवन में सत्य का आचरण करना चाहिए। सत्य का पालन अहिंसा की सिद्धि के लिए ही किया जाता है।

X- अस्तेय

de.kk eu l k okpk loHkr"q fu%Ligk

अस्तेयं निति तत् प्रोक्तं मुनिभिस्तत्त्वदर्शिनिः।।

अस्तेय शब्द का अर्थ है— चोरी न करना। किसी दूसरे की वस्तु को पाने की इच्छा करना मन द्वारा की गयी चोरी है। शरीर से अथवा वाणी से तो दूर, मन से भी चोरी न करना। एक सच्चरित्र मानव को मनसा वाचा कर्मणा (मन से, तनसे, कर्म से) यह प्रयास करना चाहिए कि वह व्यावहारिक जीवन में उन्हीं मूल्यों का आचरण करे जो समाज में स्वीकार्य हो।

?k- ब्रम्हचर्य

^de.kk eu l k okpk loHkr!"k lonk

lo= eFku R; kx cãp; ip{krA**

शरीर के सर्वाधिक सामर्थ्य में संयम पूर्वक रक्षा करने को ब्रम्हचर्य कहते हैं। हम इन्द्रियों पर जितना संयम रखते हैं, उतना ही ब्रम्हचर्य के पालन में बाधन है। अपने लक्ष्य के प्रति सजग रहते हुए सदा पुरुषार्थी रहने से ब्रम्हचर्य के पालन में सहायता मिलती है। महापुरुषों, वीरों, ऋषियों, आदर्श पुरुषों के जीवन चरित्र से प्रेरणा लेकर समाजोत्थान जैसे कार्य में लगना चाहिए।

M- अपरिग्रह

^rr% iHkReo foeDr l x% ifr%

पशूनामपरिग्रहोऽभूत् ।”

मन, वाणी व शरीर से अनावश्यक वस्तुओं व अनावश्यक विचारों का संग्रह न करने को अपरिग्रह कहते हैं। अनावश्यक वस्तुओं एवं विचारों का अनुचित, उचित स्थानों से निरुद्धदेष्ट संग्रह करना परिग्रह है। अपरिग्रह का पालन भी अहिंसा की सिद्धि के लिए किया जाता है। हमें स्वयं से प्रश्न पूछना चाहिए कि आखिर इतना संग्रह किसके लिए करता हूँ? क्यों करता हूँ व कब तक करता रहूँ? मैं कहाँ था। इस प्रकार के संग्रह से क्या होगा? इस प्रकार आत्मा का बोध होता है।

2. नियम

शौच संतोषतपः स्वाध्यायेश्वरप्राणिधनानि नियमाः — पातंजल योगसूत्र —2.33

यम की तरह नियम भी किसी इंसान को दुःखों से निजात दिलाने में महत्वपूर्ण भूमिका है, यम का संबंध मुख्यतया अन्यो के साथ है और नियम का संबंध मुख्य रूप से व्यक्तिगत जीवन से है। विशेष रूप से स्वयं के दुःखों से छुड़ाने वाला होने से इसे नियम कहते हैं।

नियम के पाँच विभाग हैं—

क. शौचख. संतोष ग. तप घ. स्वाध्याय ङ. ईश्वर प्राणिध्यान

d- शौच

शरीर व मन की शुद्धि को शौच कहा जाता है। स्नान, वस्त्र, खानपान आदि से शरीर को स्वच्छ रखता है जबकि विद्या, ज्ञान, सत्संग, संयम, धर्म आदि और ध्यानोपार्जन को पवित्र रखने के उपायों से मन की शुद्धि होती है।

[k- संतोष

अपनी योग्यता व अधिकार के अनुरूप अपनी शक्ति, सामर्थ्य, ज्ञान—विज्ञान तथा उपलब्ध साधनों द्वारा पूर्ण पुरुषार्थ करने से प्राप्त फल में प्रसन्न रहने को संतोष कहते हैं। असंतोष का मूल लोभ है यदि

व्यक्ति संतोष का पालन करना है यानि तृष्णा को, लोभ को समाप्त कर देता है तो सुख मिलता है उसके सामने संसार का सारा का सारा सुख भी टिक नहीं पाता।

X. तप

जीवन के लक्ष्य को पूरा करने के लिए हानि, लाभ, सुख-दुःख, भूख-प्यास, सर्दी-गर्मी, मान-अपमान आदि द्वन्दों को शांति व धैर्य से सह करने को तप कहते हैं।

Y. स्वाध्याय

भौतिक विद्या व आध्यात्मिक विद्या दोनों का अध्ययन करना स्वाध्याय कहलाता है। केवल भौतिक या केवल आध्यात्मिक विद्या से कोई भी अपने लक्ष्य को पूरा नहीं कर सकता है। अतः सफल जीवन के लिए दोनों का समन्वय होना अति आवश्यक है।

M. ईश्वर प्राणिध्यान

ईश्वर प्राणिध्यान का अर्थ है—समर्पण करना। आम बोल चाल की भाषा में इस प्रयोजन के लिए भक्ति विशेष शब्द का प्रयोग किया जाता है। ईश्वर प्राणिध्यान के अंतर्गत अपना सब कुछ ध्यान योग्यता ज्ञान आदि ईश्वर को समर्पित कर दे। व्यक्ति जब ऐसा करने लगता है तो उसको डर लगता है कि यदि मैं सब कुछ समर्पित कर दूँगा तो मेरे लिए कुछ बचेगा ही नहीं। ईश्वर प्राणिध्यान करने पर भी समस्त धन रहेगा तो आपके पास ही लेकिन उसे ईश्वर की आज्ञान के अनुरूप प्रयोग करना होगा।

3. आसन

MfLFkj l[kek lue**

वर्तमान दौर में योग का अर्थ और आसन का मुख्य उद्देश्य शरीर को निरोग रखना माना जाने लगा है। आसन करने पर शारीरिक लाभ तो प्राप्त होते ही हैं वरन् आसन का मुख्य उद्देश्य प्राणायाम, ध्यान, धारणा और समाधि हैं। जिस शारीरिक मुद्रा में स्थिरता के साथ लम्बे समय तक सुखपूर्वक बैठा जा सके उसे आसन कहा जाता है। शरीर की स्थिति, अवस्था व सामर्थ्य को ध्यान में रखते हुए भिन्न-भिन्न आसनों की चर्चा की गयी है।

4. प्राणायाम

“सव्याहृति सप्रणवां गायत्रीं शिरसा सह

f=iBnk;rik.k ik.kk;ke l mPprA**

प्राणायाम से ज्ञान का वह आवरण जो हमें ज्ञात नहीं है, उसका नष्ट होता है। ज्ञान को उत्कृष्टतम स्तर से वैराग्य उपजता है। कपाल-भाति, अनुलोम-विलोम आदि प्राणायाम नहीं बल्कि श्वसन क्रियायें हैं। ये क्रियायें हमें अनेकों रोगों से बचा सकने में सक्षम हैं। प्राणायाम का मनुष्य उद्देश्य मन को रोककर आत्मा व परमात्मा में लगाना एवं उनका साक्षात्कार करना है, ऐसा मन में रखकर प्राणायाम करें।

5. प्रत्याहार

l okxkfu ;Fkkde! n"Vok l dkp;r {k.kk

rFkfUn; kfufUn;kr rkfu iR;kgj;r c/kA**

प्रत्याहार का अर्थ है—संयम रखन, इंद्रियों पर नियंत्रण रखना, आँख कान, नासिका आदि इन्द्रियों को संसार के विषयों से हटाकर मन के साथ-साथ रोक (बांध) देने को प्रत्याहार कहते हैं। इन्द्रियों को वष में कैसे रखे, इसी बात को प्रत्याहार में समझाया गया है। एक को रोकते हैं, तो दूसरी इन्द्रिय तेज हो जाती है। दूसरी को रोके तो तीसरी को रोके तो चौथी, तो पांचों ज्ञानेन्द्रियों को कैसे रोके, इसी पर नियंत्रण की प्रक्रिया ही प्रत्याहार है, प्रत्याहार की सिद्धि के बिना हम अपने मन को पूर्ण रूप से परमात्मा में नहीं लगा सकते।

6. धारणा

अपने मन को अपनी इच्छा से अपने ही शरीर के अंदर किसी एक स्थान में बाँधने, रोकने या टिका देने को धारणा कहते हैं। जहाँ धारणा की जाती है, वहीं ध्यान करते का विधान है। ध्यान के बाद समाधि के माध्यम से आत्मा प्रभु का दर्शन करती है और दर्शन वहीं हो सकता है, जहाँ आत्मा और प्रभु दोनों उपस्थित हो। प्रभु तो शरीर के अंदर भी है और बाहर भी, परन्तु आत्मा केवल शरीर के अंदर ही विद्यमान है। इसीलिए शरीर से बाहर धारण नहीं करनी चाहिए।

7. ध्यान

वशिष्ठ उपसंहार में ध्यान के लिए कहा गया है कि—

“ध्यानमेव मोक्षश्च महामार्गस्तपोधन” — वशिष्ठ संहिता योगकाण्ड चतुर्थ अध्याय

ध्यान की प्रक्रिया के अंतर्गत स्थिरता व सुखपूर्वक बैठकर आंखें कोमलता से बंद कर, दसो यम—नियमों का चिंतन करते हुए यह अवलोचन करें कि आप पिछले दिन अपने व्यवहार को उनके अनुरूप कितना चला पाये हैं। तत्पश्चात् मन को निर्मल करने के लिए प्राणायाम करें। उसके पश्चात् अपने मन को शरीर के अंदर किसी स्थान पर (धारणा) टिका कर स्वयं के अनन्तर चेतन स्वरूप होने व आपसे भिन्न इस शरीर के नष्ट होने पर विचार करें। ध्यान को ही उपासना भी कहा जाता है।

8. समाधि

वशिष्ठ संहिता योग काण्ड चतुर्थ अध्याय में समाधि के विषय में कहा गया है कि—

ॐ लेफ/क लेरकोल्फक थोक्रेजेक रेउ
 इजेक रेफल्फक इकड्र लेफ/क इर; ; क्ख रेउ आ**

ध्यान करते-करते जब प्रत्यक्ष किसी वस्तु का दर्शन होता है तो उस प्रत्यक्ष को समाधि कहते हैं। जिस प्रकार आग में पड़ा कोयला अग्नि रूप हो जाता है और उसमें अग्नि के सभी गुण आ जाते हैं। उसी प्रकार समाधि में जीवात्मा में ईश्वर के सभी गुण प्रतिबिम्बित होने लगते हैं। जीवात्मा का एक मात्र प्रयोजन मुक्ति है और योगी इस प्रयोजन को समाधि से पूर्ण करता है।

निष्कर्ष

अध्ययन के परिणाम बताते हैं कि मानवीय मूल्यों के विकास में अष्टांग योग की महती भूमिका होती है।

वशिष्ठ संहिता योग काण्ड के चतुर्थ अध्याय में अष्टांग योग की वृहत्योगि यागवल्क्य स्मृति में प्रशंसा करते हुए कहा गया है कि—

“यमैश्च नियमैश्च आसनैः प्राणसंयमैः

iR;kgkj.k /;kuu /kkj.kkfe% lekf/ku%

v"Vkuu r| ;kxu miL;kRek foeP; rA**

अष्टांग मार्ग के विभिन्न आयाम मानवता के आधार सत्य, अहिंसा, शांति, परोपकारिता, संतुलन शरीर को सबल बनाने में सहजता प्रदान करते हैं। योग से न केवल मानवीय मूल्यों का वरन् भावनात्मक जटिलताएं सुलझने में भी सहायता मिलती है। योग के माध्यम से आप अपनी इन्द्रियों की सुखानुभूति की क्षमता में वृद्धि ला सकते हैं। क्योंकि जब व्यक्ति आंतरिक तौर पर मजबूत होगा तभी वह एक स्वस्थ समाज का निर्माण करने में अहम भूमिका निभा सकता है। अष्टांग योग के द्वारा विभिन्न अनुभवों में अभिवृद्धि लायी जा सकती है तथा स्वास्थ्य में बेहतरी के लिए योग को अपनाना कई दृष्टियों में लाभकारी है। इसके द्वारा शारीरिक और मानसिक दोनों ही तरह के फायदे लिए जा सकते हैं। स्वास्थ्य सम्बन्धी अने समस्याएँ एक साथ हल की जा सकती हैं और यही हमारी संस्कृति एवं समाज को व्यापक रूप से समृद्ध कर सकता है।

संदर्भ ग्रन्थ सूची

1. पतंजलि योगसूत्र प्रथमपाद—समाधिपाद—मानवता प्रकाशक—राजाजीपुरम्, लखनऊ।
2. <http://bhaktisatsang.com/Patanjali-ashtang-yoga-hindi...>
3. <http://www.yogapoint.com/info/ashtang.htm...>
4. [http://hi.wikipedia.org/wiki/v"Vkax ;ksx....](http://hi.wikipedia.org/wiki/v)
5. [http://medium.com/@Sadhokanshit/ ;ksx o v"Vkax ;ksx D;k gS....](http://medium.com/@Sadhokanshit/ ;ksx o v)
6. <http://www.art of living.org/in-hi/yoga/patanjali-yogasutra....>
7. <http://www.researchgate.net/Publication/283443359>
8. <http://hindi.websunia.com/article/yoga-articles>